आचार्य बुद्धघोस

कृत

परमत्थजोतिका

सुत्तनिपात-अट्ठकथा

भाग - २

हिंदी अनुवाद

अनुवादक

प्रो. अंगराज चौधरी

विपश्यना विशोधन विन्यास

आचार्य बुद्धघोस
कृत

परमत्थजोतिका

सुत्तनिपात-अट्ठकथा

भाग - २

हिंदी अनुवाद

अनुवादक
प्रो. अंगराज चौधरी

विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी

H111 - सुत्तनिपात-अट्ठकथा भाग - 2 (अजिल्द)
H112 - सुत्तनिपात-अट्ठकथा भाग - 2 (सजिल्द)

© विपश्यना विशोधन विन्यास
सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करणः सितंबर २०२२

मूल्यः रु. 590.00 **(अजिल्द)**
मूल्यः रु. 890.00 **(सजिल्द)**

ISBN 978-81-7414-457-7 (Paperback)
ISBN 978-81-7414-459-1 (Hardbound)

प्रकाशकः
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२ ४०३
जिला- नाशिक, महाराष्ट्र
फोनः ०२५५३-२४४९९८, २४३५५३, २४४०७६,
२४४०८६, २४४१४४, २४४४४०
Email: vri_admin@vridhamma.org
Website: www.vridhamma.org

मुद्रकः
अपोलो प्रिंटिंग प्रेस
२५९, सीकॉफ लिमिटेड, ६९ एम. आय. डी. सी.,
सातपुर, नाशिक-४२२००७, महाराष्ट्र

सुत्तनिपात अट्ठकथा भाग - २

विषयानुक्रमणिका

प्रकाशकीय ८

भूमिका ९

२. चूळवर्ग २३

१. रतनसुत्तवर्णना २५

२. आमगन्धसुत्तवर्णना ५३

३. हिरिसुत्तवर्णना ६५

४. मङ्गलसुत्तवर्णना ७०

५. सूचिलोमसुत्तवर्णना ९९

६. कपिलसुत्त-(धम्मचरियसुत्त)-वर्णना १०३

७. ब्राह्मणधम्मिकसुत्तवर्णना ११०

८. धम्मसुत्त-(नावासुत्त)-वर्णना १२४

९. किंसीलसुत्तवर्णना १२९

१०. उट्ठानसुत्तवर्णना १३४

११. राहुलसुत्तवर्णना १३८

१२. निग्रोधकप्पसुत्त-(वङ्गीससुत्त)-वर्णना १४३

१३. सम्मापरिब्बाजनीयसुत्त-(महासमयसुत्त)-वर्णना १५१

१४. धम्मिकसुत्तवर्णना १६४

३. महावर्ग १७७

१. पब्बज्जासुत्तवर्णना १७९

२. पधानसुत्तवर्णना १८६

३. सुभासितसुत्तवर्णना १९६

४. पूरळाससुत्त-(सुन्दरिकभारद्वाजसुत्त)-वर्णना २०१
५. माघसुत्तवर्णना २१५
६. सभियसुत्तवर्णना..२२३
७. सेलसुत्तवर्णना...२४१
८. सल्लसुत्तवर्णना २५७
९. वासेट्ठसुत्तवर्णना २६४
१०. कोकालिकसुत्तवर्णना २८२
११. नालकसुत्तवर्णना...२९२
१२. द्वयतानुपस्सनासुत्तवर्णना...३११
४. अष्टकवर्ग ३२५
१. कामसुत्तवर्णना...३२७
२. गुहट्ठकसुत्तवर्णना ३३१
३. दुट्ठट्ठकसुत्तवर्णना ३३६
४. सुद्धट्ठकसुत्तवर्णना ३४१
५. परमट्ठकसुत्तवर्णना...३४७
६. जरासुत्तवर्णना ३५१
७. तिस्समेत्तेय्यसुत्तवर्णना...३५५
८. पसूरसुत्तवर्णना..३५९
९. मागण्डियसुत्तवर्णना ३६५
१०. पुराभेदसुत्तवर्णना ३७२
११. कलहविवादसुत्तवर्णना..३७७
१२. चूळब्यूहसुत्तवर्णना..३८३
१३. महाब्यूहसुत्तवण्णना ३८९
१४. तुवटकसुत्तवर्णना ३९६

१५. अत्तदण्डसुत्तवण्णना ४०२
१६. सारिपुत्तसुत्तवण्णना..४०८
५. पारायणवग्ग ४१५
वत्थुगाथावण्णना ४१७
१. अजितसुत्तवण्णना ४३२
२. तिस्समेत्तेय्यसुत्तवण्णना...................................४३५
३. पुण्णकसुत्तवण्णना ४३७
४. मेत्तगूसुत्तवण्णना..४४०
५. धोतकसुत्तवण्णना..४४४
६. उपसीवसुत्तवण्णना ४४७
७. नन्दसुत्तवण्णना ४५१
८. हेमकसुत्तवण्णना...४५४
९. तोदेय्यसुत्तवण्णना ४५६
१०. कप्पसुत्तवण्णना..४५८
११. जतुकण्णिसुत्तवण्णना.....................................४६०
१२. भद्रावुधसुत्तवण्णना ४६२
१३. उदयसुत्तवण्णना ४६४
१४. पोसालसुत्तवण्णना ४६६
१५. मोघराजसुत्तवण्णना.......................................४६८
१६. पिङ्गियसुत्तवण्णना...४७०
पारायणत्थुतिगाथावण्णना ४७२
निगमनकथा...४७९
शब्दानुक्रमणिका ४८१
विपश्यना साधना केंद्र...४९०

समर्पण

विपश्यना आचार्यप्रवर श्री सत्यनारायण गोयन्काजी को सादर समर्पित

जिन्होंने मुझे बुद्ध के व्यावहारिक दर्शन और पालि साहित्य के मर्म को समझने की दृष्टि दी।

– अंगराज चौधरी

प्रकाशकीय

लगभग १६०० वर्ष पूर्व बुद्धघोस द्वारा लिखित सुत्तनिपात अट्ठकथा, जिसे परमत्थजोतिका भी कहते हैं, का आज तक हिंदी में अनुवाद नहीं हुआ है। प्रो० अंगराज चौधरी ने सर्वप्रथम इसका हिंदी में अनुवाद किया है। विपश्यनाचार्य पूज्य गोयन्काजी से जो दृष्टि इन्होंने पायी है उसी के आलोक में यह अनुवाद कार्य संपन्न हुआ है। जगह-जगह पर इस पुस्तक में साधना संबंधी बहुत-सी गंभीर बातें हैं जो आजकल सुबोध नहीं हैं। फिर भी विपश्यना का अभ्यास करनेवाले इसे बहुत दूर तक समझ सकते हैं– इसमें संदेह नहीं है।

पू० गोयन्काजी तीन भिक्षुओं द्वारा किये गये त्रिपिटक के अनुवाद से परिचित थे, इसलिए उनकी बड़ी इच्छा थी कि यदि अट्ठकथाओं का हिंदी में अनुवाद हो जाय तो हिंदी भाषा तो समृद्ध होगी ही, बहुत से पाठक जो पालि नहीं समझते हैं इसे पढ़कर लाभान्वित होंगे।

उन्हें यह भी पता था कि त्रिपिटक का हिंदी अनुवाद भी विपश्यना के दृष्टिकोण से न होने पर शतप्रतिशत ठीक नहीं है। इसे ही देखने के लिए उन्होंने प्रो० अंगराज चौधरी को अंगुत्तर निकाय का भदंत कौसल्यायन द्वारा किये अनुवाद को आधार बनाकर जहां-जहां विपश्यना का उल्लेख आता है, सुधारने को कहा था ।

प्रो० अंगराज चौधरी ने सुत्तनिपात अट्ठकथा भाग-२ का हिंदी अनुवाद आज से लगभग १५ वर्ष पहले कर दिया था। अब उसको इन्होंने पुनः सुधार कर छापने योग्य बनाया है।

विपश्यना विशोधन विन्यास से अट्ठकथा साहित्य की हिंदी में छपनेवाली पुस्तकों में यह द्वितीय पुस्तक है।

विपश्यना विशोधन विन्यास इस द्वितीय पुष्प को पाठकों को समर्पित करता है और मंगल कामना करता है कि उन्हें इसका पूरा लाभ मिले।

विपश्यना विशोधन विन्यास

भूमिका

सुत्तनिपात अट्ठकथा– भाग १ सिर्फ सुत्तनिपात के उरग वग्ग की अट्ठकथा है। सुत्तनिपात अट्ठकथा भाग २– शेष बचे वर्गों का जैसे चूलवग्ग, महावग्ग, अट्ठकवग्ग और पारायण वग्ग की अट्ठकथा है। जहां प्रथम भाग में सिर्फ बारह (१२) सुत्तों की व्याख्या है, वहां द्वितीय भाग में शेष सुत्तों की व्याख्या है।

रतनसुत्त की देशना भगवान ने वैशाली में तब की थी जब वहां के लोग अकाल, रोग और प्रेत आदि से पीड़ित थे। इस सुत्त में तीन रत्नों– बुद्ध, धर्म और संघ का वर्णन है। वे क्यों रत्न कहें जाते हैं और साथ ही उनकी क्या-क्या विशेषताएं हैं– इन बातों पर भी विस्तार से प्रकाश डाला गया है। इसी सुत्त में कहानी के माध्यम से यह बताया गया है कि 'वैशाली तथा लिच्छवी' आदि नाम क्यों पड़े।

आमगन्धसुत्त में भगवान काश्यप बुद्ध ने तिष्य ब्राह्मण को यह बताया है कि आमगंध क्या है। मांस-मछली खाना आमगंध नहीं है, पर अकुशल पापकर्म करना आमगंध है। शारीरिक, वाचसिक और मानसिक अकुशल कर्म आमगंध हैं और इनके विपरीत जो तीन प्रकार के कुशल कर्म हैं वे आमगंध नहीं हैं।

हिरिसुत्त में सच्चे और अच्छे मित्र के लक्षण बताये गये हैं।

महामंगलसुत्त में मंगल क्या है इसे सविस्तर बताया गया है। मंगल का अर्थ है वह काम जिससे किसी का हित होता है, जिससे वैयक्तिक, पारिवारिक और सामाजिक जीवन शांत तथा सुखमय होता है। अड़तीस प्रकार के मंगलों में मूर्खों की संगति न करना, पंडितों की संगति करना, पूज्यों की पूजा करना, अनुकूल स्थान में निवास करना, अपने को सत्पथ पर लगाना, बहुश्रुत होना, माता-पिता की सेवा करना, पुत्र-कलत्र का पालन-पोषण करना, दान देना, विनम्र होना, संतुष्ट होना आदि हैं। साथ ही लोकधर्म जैसे हानि-लाभ, निंदा-प्रशंसा होने पर विचलित नहीं होना, यह भी श्रेष्ठ मंगल है।

सूचिलोमसुत्त में तृष्णा को सभी वासनाओं का मूल बताया गया है।

धम्मचरियसुत्त में शीलवान भिक्षुओं की संगति करने तथा जो शीलवान नहीं है उनसे दूर रहने की बात कही गयी है।

ब्राह्मणधम्मिकसुत्त ऐतिहासिक दृष्टि से बड़ा महत्त्वपूर्ण है चूंकि इसी से पता चलता है कि समाज में गो-हत्या कब से प्रारंभ हुयी। ब्राह्मण पुरोहितों के लोभ के कारण यज्ञों में हिंसा प्रारंभ हुई और माता कही जानेवाली गौओं को काटा जाने लगा। यहीं पर कहा गया है कि जिस तरह हमारे माता-पिता या भाई-बंधु हैं उसी तरह गायें हमारे परम मित्र हैं जिनसे औषधियां प्राप्त होती हैं। ये अन्नदा, बलदा, वर्णदा तथा सुखदा हैं।

नावासुत्त में गुरु अथवा आचार्य की महिमा बतायी गयी है।

किंसीलसुत्त में भगवान बुद्ध ने सारिपुत्त के यह पूछने पर कि किन कर्मों को अच्छी तरह से करने

में लगा व्यक्ति निर्वाण का अधिगम कर सकता है, उन कर्मों को गिनाया है जिनके करने से निर्वाण की प्राप्ति की जा सकती है।

उट्ठानसुत्त में कहा गया है कि अंदर कांटा चुभा है अर्थात तृष्णा के शल्य चुभे हैं। अतः सोना छोड़, अप्रमत्त हो एक-एक क्षण में दृढ़ता एवं सजगता के साथ निर्वाण की प्राप्ति के लिए उद्यमशील रहो।

राहुलसुत्त में भगवान ने राहुल को यह उपदेश दिया है कि पांच प्रकार के प्रिय तथा मनोरम काम-भोगों का त्याग, उत्तम मित्रों का साथ, शांत तथा निःस्तब्ध स्थान में शयन, चार प्रत्ययों में संतोष, प्रातिमोक्ष के नियमों का पालन, रागयुक्त निमित्तों का त्याग, अभिमान का त्याग तथा अशुभ की भावना करने से निर्वाण की अवाप्ति होगी।

वङ्गीससुत्त में आयुष्मान वङ्गीस ने अपने उपाध्याय न्यग्रोधकल्प नामक स्थविर के बारे में भगवान से पूछा कि उनकी प्राप्ति के बारे में बतायें। भगवान ने कहा कि वे नाम-रूप की दीर्घकाल से बहने वाली मार की नदी को पार कर चुके हैं। उन्होंने तृष्णा के कारणों को जानकर उन्हें समूल उखाड़ फेंका है।

सम्मापरिब्बाजनीयसुत्त में निर्मित बुद्ध द्वारा पूछे गये प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान बुद्ध ने लोक में अच्छी तरह से विचरण करनेवाले भिक्षु के आचरण के बारे में कहा है।

धम्मिकसुत्त में भिक्षुओं तथा गृहस्थों के धर्म पर प्रकाश डाला गया है।

महावग्ग के प्रथम सुत्त **पब्बज्जासुत्त** में आनंद ने भगवान की प्रव्रज्या के बारे में कहते हुए यह कहा कि वे बिंबिसार के राज्य प्रलोभन में न पड़कर दुःखमुक्ति के लिए मार्ग खोजने चले गये।

पधानसुत्त में तपस्यारत गौतम और मार के बीच कथोपकथन है। मार उनके कृश शरीर को देखकर उन्हें तप से विरत होकर ब्रह्मचर्य का पालन और अग्निहोम कर पुण्य संचय करने कहता है। इस पर गौतम ने कहा कि मुझे तुम प्रमत्तबंधु के उपदेश की आवश्यकता नहीं है। मुझमें श्रद्धा है, वीर्य है और प्रज्ञा है।

साथ ही यह भी दिखाया गया है कि कैसे गौतम ने मार की दस प्रकार की सेना पर विजय प्राप्त की। काम की दस सेनायें हैं– काम, अरति, भूख-प्यास, तृष्णा, स्त्यान-मृद्ध, भय, विचिकित्सा, मान-म्रक्ष स्तम्भ, लाभसत्कार और श्लोक।

सुभासितसुत्त में दिखाया गया है कि चार अंगों से युक्त वचन को सुभाषित कहते हैं– सुभाषित बोलना, धर्म ही के बारे में बोलना, प्रिय बोलना और सत्य बोलना।

सुन्दरिकभारद्वाज सुत्त में भगवान बुद्ध और सुंदरिक भारद्वाज के बीच कथोपकथन है। भगवान ने यहां बताया कि हव्य पाने के योग्य कौन है। सही में जो, अंतिम देहधारी तथागत हैं, वही पूरळास (हव्य) के योग्य हैं। यहां उन गुणों का उल्लेख है जिनसे बुद्ध के अनुसार आध्यात्मिक उन्नति होती है। भगवान के इस उपदेश का असर ऐसा हुआ कि सुंदरिक भारद्वाज बुद्ध की शरण गये, उनसे उपसंपदा पायी और वे अर्हत हुए।

माघसुत्त में यह बताया गया है कि किसको दान देने से महाफल होता है। भगवान ने दान तथा दान देने और लेने वाले योग्य व्यक्ति के गुणों को यहां व्याख्यायित किया है।

सभियसुत्त में यह दिखाया गया है कि सभिय परिव्राजक उस समय के छः शास्ता और आचार्यों के उत्तर से संतुष्ट न होकर भगवान के उत्तर से संतुष्ट हो उनकी शरण जाता है और अर्हत्व प्राप्त करता है।

सभिय ने भगवान से 'ब्राह्मण', 'श्रमण', 'स्नातक' तथा 'नाग' के बारे में पूछा, 'क्षेत्रजिन', 'श्रोत्रिय', 'पंडित' और 'मुनि' के बारे में भी पूछा, 'आर्य', 'आचारवान' तथा 'परिव्राजक' के बारे में भी पूछा जिनका उत्तर भगवान ने दिया।

सेलसुत्त में यह वर्णित है कि केणिय जटिल ने भगवान को, जब वे अंगुत्तराप जनपद में १२५० भिक्षुओं के साथ विहार कर रहे थे, भोजन पर निमंत्रित किया। सेल ब्राह्मण को जब यह बात मालूम हुयी तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। 'बुद्ध' नाद (घोष) भी लोक में दुर्लभ है। बुद्ध तो महापुरुष होते हैं जिनके बत्तीस लक्षण होते हैं। पुनः वह बुद्ध से मिलने गया, उनके शरीर में महापुरुष के लक्षणों को देख प्रभावित हुआ, शिष्यों के साथ उनकी शरण गया और अर्हत्व की प्राप्ति की। इसी सुत्त में चक्रवर्त्ती राजा के सात रत्नों का भी उल्लेख है।

सल्लसुत्त में जीवन की अनित्यता वर्णित है। साथ ही यह भी वर्णित है कि तृष्णा के प्रहाण ही से दुःख से छुटकारा पाकर मनुष्य निर्वाण का अधिगम कर सकता है।

वासेट्ठसुत्त में वर्ण व्यवस्था का वैज्ञानिक दृष्टिकोण से खंडन किया गया है। भगवान ने यह दिखाया है कि मनुष्य-मनुष्य में कोई फर्क नहीं है। जन्म से कोई बड़ा या छोटा नहीं होता, कर्म से होता है। जन्म के आधार पर मनुष्यों की कोई अलग पहचान नहीं होती, मनुष्य-मनुष्य में भेद पेशे के आधार पर होता है। जो कृषि करता है वह कृषक होता है, जो व्यापार करता है वह व्यापारी तथा जो चोरी करता है वह चोर होता है। साथ ही यहां ब्राह्मण की सही परिभाषा दी गयी है।

कोकालिकसुत्त में दिखाया गया है कि संतों की निंदा करने के फल क्या होते हैं। सारिपुत्त तथा मोग्गल्लान की निंदा करनेवाले भिक्षु कोकालिक बहुत ही भीषण रोग से ग्रसित हो मर कर पद्म नरक में उत्पन्न हुआ।

इसी सुत्त में यह कहा गया है कि वाणी पर संयम के अनेक लाभ हैं, संयम नहीं करने पर बड़ी हानि हो सकती है। जिह्वा की तुलना कुठारी से की गयी है। मूर्ख जिह्वा पर अगर संयम नहीं रखता है तो वह स्वयं अपने को काटता है।

नालकसुत्त में भगवान बुद्ध ने असित कालदेवलऋषि के भांजे को उपदेश दिया है। यहां उन्होंने दुष्कर तथा दुर्विज्ञेय ज्ञानमार्ग (मोनेय्य पटिपदा) की व्याख्या की है।

द्वयतानुपस्सनासुत्त में प्रतीत्यसमुत्पाद के नियम द्वारा दुःख की उत्पत्ति तथा उसके निरोध पर प्रकाश डाला गया है।

अट्ठकवग्ग के प्रथम कामसुत्त में काम-भोगों के दुष्परिणाम दिखाये गये हैं।

गुहट्ठकसुत्त में संसार की असारता दिखायी गयी है।

दुट्ठट्ठकसुत्त में यह कहा गया है कि मुनि किसी विशेष दृष्टि में नहीं पड़ते।

सुद्धट्ठकसुत्त में यह बताया गया है कि आसक्ति रहित होने पर मुक्ति संभव है।

परमट्ठकसुत्त का सार यह है कि जो सत्य का साक्षात्कार कर लेता है, वह किसी दार्शनिक विवाद में नहीं पड़ता।

जरासुत्त में अनित्यता का वर्णन है।

तिस्समेत्तेय्यसुत्त में मैथुन धर्म का त्याग करना कहा गया है क्योंकि जो इस अनार्य मार्ग पर चलता है वह निर्वाण की प्राप्ति कैसे कर सकता है?

पसूरसुत्त में यह दिखाया गया है कि ज्ञानी पुरुष विवाद में नहीं पड़ते।

मागण्डियसुत्त में यह दिखाया गया है कि जब निष्काम भगवान के सम्मुख मागण्डिय ब्राह्मण ने अपनी रूपवती कन्या मागण्डिया को लाया और भगवान से विवाह का प्रस्ताव रखा तो भगवान ने कहा कि जब मार की कन्याओं, तृष्णा, अरति और रगा को देखकर भी मुझमें काम वासना नहीं जागी तो मल-मूत्र से परिपूर्ण मागण्डिया को देखकर भला वह कैसे जागेगी?

पुराभेदसुत्त में शांत पुरुष को परिभाषित किया गया है।

कलह-विवादसुत्त में कलह के कारण दिखाये गये हैं। कलह-विवाद ही नहीं बल्कि अन्य अवगुण जैसे मान-अभिमान, चुगलखोरी, द्वेष, विलाप, शोक आदि सभी प्रिय से उत्पन्न होते हैं क्योंकि प्रिय के प्रति तृष्णा उत्पन्न होती है।

सतिपट्ठानसुत्त में कहा गया है **यं रूपं पियरूपं सातरूपं तत्थ तण्हा उप्पज्जमाना उप्पज्जति** अर्थात तृष्णा उन रूपों को देखकर उत्पन्न होती है जो प्रिय तथा आनंददायक है आदि।

चूळवियूहसुत्त में यह दिखाया गया है कि सत्य एक है, विवाद में पड़ना व्यर्थ है।

महावियूहसुत्त में यह स्पष्टता से दिखाया गया है कि शुद्धता प्राप्त करने के लिए किसी भी दृष्टि से बंधना बिल्कुल आवश्यक नहीं है। दृष्टि को छोड़कर ही व्यक्ति शुद्ध हो सकता है।

तुवटकसुत्त में भिक्षुओं की चर्या विशद रूप में वर्णित है। भिक्षु सभी प्रपंचों के मूल अहंकार को समझकर उसका अंत करे। जिस किसी भी धर्म को जाने उसमें अभिमान न करे। अपने को श्रेष्ठ, हीन या समान न समझे, शांत रहे तथा शांति की खोज करे। किसी भी हालत में भिक्षु तृष्णा न करे आदि-आदि।

अत्तदण्डसुत्त में भगवान के गृह-त्याग के कारण बताये गये हैं। उन्हें कैसे संवेग उत्पन्न हुआ? उन्होंने देखा कि जैसे जल के कम हो जाने पर मछलियां तड़फड़ाने लगती हैं, उसी तरह शाक्यों और कोलियों को परस्पर विरुद्ध देख भय उत्पन्न हुआ।

सारिपुत्तसुत्त में भी भिक्षु की चर्या सविस्तर वर्णित है। संयमी भिक्षु के वचन कैसे हों, उनकी गोचरभूमि क्या हो– इन सब बातों पर भगवान ने प्रभूत प्रकाश डाला है। यहां शील के पालन पर, मैत्री के अभ्यास पर, संतोष धारण करने पर, वितर्कों को त्यागने पर तथा स्मृतिमान होकर रहने पर जोर डाला गया है।

पारायणवग्ग में बावरी ब्राह्मण के सोलह शिष्यों द्वारा भगवान से विविध विषयों पर पूछे गये प्रश्नों

के उत्तर हैं।

यहीं पर वे सोलह शिष्य किस रास्ते से, किन नगरों से होते हुए राजगीर आये– इसका भी वर्णन है। बावरी ब्राह्मण में महापुरुष के तीन लक्षण थे– यह भी यहीं उल्लिखित है। सोलह शिष्यों द्वारा पूछे गये कुछ प्रश्न निम्नलिखित हैं।

संसार किससे आवृत्त है? किससे यह प्रकाशित नहीं होता? इसका लेप (उबटन) क्या है? इसके लिए महाभय क्या है? तृष्णा की सर्वत्र बहती हुयी धाराएं कैसे निरुद्ध हो सकती हैं? प्रज्ञा, स्मृति तथा नामरूप का अंत कहां होता है? इस संसार में कौन संतुष्ट है? किसमें चंचलताएं नहीं हैं? लोगों ने यज्ञ करना क्यों शुरू किया?

संसार में अनेक प्रकार के दुःख कहां से उत्पन्न होते हैं? संसार में कौन और कैसे तृष्णातीत हो सकता है? कौन नामरूप से विमुक्त हो वैसे बुझ जाता है जैसे चिनगारी। निर्वाण क्या है?

पांच इंद्रियों के विषयों के प्रति अनासक्त होना निर्वाण है। जो वासनारहित, तृष्णारहित और संदेहरहित है, उसी ने विमोक्ष प्राप्त कर लिया है।

अकिंचन और अनासक्त होना ही वह द्वीप है जहां बुढ़ापा और मृत्यु से रक्षा हो सकती है।

यहां जो प्रश्न पूछे गये और जो उत्तर भगवान द्वारा दिये गये, यदि उनमें से एक भी प्रश्न के अर्थ को समझकर कोई व्यक्ति उस पथ पर चले तो वह जन्म-जरा-मृत्यु के पार चला जाय– इसलिए इस वर्ग को ही पारायण वर्ग कहते हैं।

रतनसुत्तवर्णना में वैशाली नाम क्यों पड़ा, पुनः वह वज्जी प्रदेश क्यों कहा गया और वहाँ के निवासियों को लिच्छवि क्यों कहते हैं– इन सभी के बारे में यहाँ इतिहास तो नहीं लेकिन इतिहासकल्प दिया गया है। यह रतनसुत्तवर्णना के प्रारंभ में सविस्तर वर्णित है।

इसी सुत्त की वर्णना में चक्रवर्त्ती राजा के सात रत्नों का वर्णन है। ये हैं– चक्ररतन, हस्तिरतन, अश्वरतन, मणिरतन, स्त्रीरतन, गृहपतिरतन और परिणायकरतन। इन रतनों के बारे में विशेष जानने के लिए रतनसुत्त की अट्ठकथा पढ़ें।

आमगन्धसुत्तवर्णना में कई प्रकार के काय-क्लेश को सहने वाले, तप करने वाले तापसों का उल्लेख है। कुछ नंगे रहते थे, कुछ के सिर मुंड़े होते थे, कुछ जटा रखते थे और देह में धूल लगाते थे, कुछ कठोर व्याघ्रचर्म धारण करते थे, कुछ अग्नि की परिचर्या करते थे, कुछ काय-क्लेश सहते थे– जैसे उकडूं बैठना, कुछ यज्ञाग्नि में होम डालते थे, कुछ अश्वमेध आदि यज्ञ करते थे और कुछ ऋतु सेवन करते थे अर्थात ग्रीष्म ऋतु में गर्मी का सेवन जैसे पंचाग्निव्रत, कुछ वर्षा ऋतु में वृक्ष की जड़ों के पास रहते थे, कुछ जाड़े के दिनों में जल में प्रवेश कर काय को कष्ट देते थे।

हिरिसुत्तवर्णना में आठ प्रकार के तापसों का उल्लेख है।

सपुत्तभरिया– ऐसे तापस थे, जो पुत्र-पत्नी के साथ प्रव्रजित हो, कृषि तथा वाणिज्य से जीविका उपार्जन करते थे। केणिय जटिल इसके उदाहरण थे।

उञ्छाचारिका– नगर द्वार पर आश्रम बनवा कर क्षत्रिय तथा ब्राह्मण के बच्चों को विद्या सिखाकर

शुल्क में सोना आदि न लेकर तिल तथा चावल लेते थे।

सम्पत्तकालिका– तीसरे प्रकार के तापस थे जो भोजन के समय जो प्राप्त हो जाय उसे खाकर संतोष करते थे।

अस्ममुट्ठिका– वैसे तापस थे जो अपनी मुट्ठी में पत्थर रखते थे और भूख लगने पर जो भी पेड़ सामने दिखाई पड़ता, उस पत्थर से उसकी छाल लेकर खाते, उपोसथ रखते थे और ब्रह्मविहार की भावना करते थे।

दन्तलुय्यका– वैसे तापस थे जो किसी औजार से नहीं बल्कि अपने दातों से पेड़ों की छाल छीलकर खाते थे।

पवत्तफलिका– वैसे तापस थे, जो किसी प्राकृतिक झील के किनारे या किसी वनखंड में रहते थे। झील में जो कुछ भी कमल मृणाल होता उसे खाते। वनखंड में फूल या फल जो मिलता उसे खाकर रहते, दोनों के न रहने पर अंततः वृक्षों की छाल खाकर रहते, लेकिन भोजनार्थ कहीं और नहीं जाते थे। उपोसथ अंगों का अधिष्ठान कर ब्रह्मविहार करते थे।

वण्टमुत्तिका– वैसे तापस थे जो पेड़ की डालियों से गिरे पत्ते आदि को खाकर रहते थे।

ये आठों प्रकार के तापस इस तरह जीवन-यापन करते थे।

एक बात जो यहां ध्यान देने योग्य है वह है वैसा तापस जो **सपुत्तभरिया** होते थे। ऐसा कहा जाता है कि दिन भर वे तापस की भांति रहते और रात में पति-पत्नी के रूप में।

इस प्रकार **हिरिसुत्तवर्णना** में उस समय प्रचलित विभिन्न प्रकार की तपस्याओं का वर्णन मिलता है।

मंङ्गलसुत्तवर्णना से पता चलता है कि उस समय का समाज अंधविश्वासों में डूबा था। कुछ लोग चातक पक्षी, अंलकृत घड़ा, मछली या अश्व को देखते तो उसी को मंगल या शुभ समझते। इसी तरह अच्छे नाम को सुनते तो उसे ही मंगल समझते। कुछ लोग खाने की चीजों जैसे– दही आदि को मंगल समझते। उस समय भगवान बुद्ध ने सचमुच मंगल क्या है– इसके बारे में विस्तार से मंङ्गलसुत्त में बताया है। इसी सुत्त में पांच प्रकार के कोलाहलों की चर्चा है जैसे कप्प कोलाहल[१], चक्कवत्ति कोलाहल (शोरगुल), बुद्ध कोलाहल, मंङ्गल कोलाहल और मोनेय्य कोलाहल। इनके बारे में विस्तार से जानने के लिए मंङ्गलसुत्त वर्णना पढ़ें। यहां यह भी ध्यातव्य है कि प्रथम दो प्रकार के कोलाहलों की उद्घोषणा कामावचर देव करते हैं और अंतिम तीन की शुद्धावास या रूपावचर के देव करते हैं।

इसी सुत्तवर्णना से यह भी पता चलता है कि अट्ठकथा काल के आते-आते गौतम बुद्ध का दैवीकरण हो गया था। बुद्ध को यहां चमत्कार (प्रातिहार्य) करते दिखाया गया है। यह बात निम्नलिखित कहानी से स्पष्ट हो जायगी।

एक बार भगवान बुद्ध राजगीर में भिक्षाटन कर रहे थे। सुमन नामक माली ने जो राजा बिंबिसार को प्रत्येक दिन फूल देता था, बुद्ध को महापुरुष के ३२ लक्षणों से युक्त देखा। उसके मन में उस समय यह भाव जागा कि जो फूल मैं राजा को देता हूं उससे मुझे क्या मिलेगा? ज्यादा से ज्यादा सौ

१. uproar, commotion, announcement, होहल्ला, शोरगुल, घोषणा (यह घोषणा कि बुद्ध उत्पन्न होंगे)

या हजार मुद्रा मुझे मिलेंगे जो इस संसार में सुखी जीवन जीने के लिए यथेष्ठ नहीं है। अगर मैं इन फूलों को बुद्ध को अर्पित करूं तो मुझे सद्यः लाभ होगा। इस लोक में तथा दूसरे लोक में सुखी रहूंगा। यह सोचकर उसने मुट्ठी भर फूल बुद्ध की ओर फेंके। वे फूल मालाओं का वितान बनकर बुद्ध के ऊपर स्थित हो गये। उसने इस दृश्य को देखकर यह समझा कि यह उस पर बुद्ध की कृपा है। वह और भी प्रसन्न हुआ और उसने पुनः पुष्प फेंके। इस बार पुष्पों की कंचुकी बनी और बुद्ध के ऊपर स्थित हुई। इस तरह उसने आठ बार फूलों को फेंका। वे फूल ऊपर जाकर कूटागार के रूप में स्थित हुए और बुद्ध के ऊपर स्थित हुए। जहां-जहां बुद्ध जाते, कूटागार भी वहां-वहां जाता। राजगीर के लोगों ने इस प्रातिहार्य को देखा। आनंद ने बुद्ध की स्मिति देख इसका कारण जानना चाहा तो बुद्ध ने कहा कि सुमन माली इस फूल के दान से देवलोक तथा मनुष्य लोक में संसरण करते हुए एक लाख कल्प के बीतने पर सुमनिस्सर नामक प्रत्येकबुद्ध होगा।

इसी सुत्त की वर्णना में १२ प्रकार की संतुष्टियां बतायी गयी हैं।

कपिलसुत्तवर्णना में दो प्रकार के धुरों– गंध (ग्रंथ) धुर और विपस्सना (विपश्यना) धुर का उल्लेख है। धुर का अर्थ होता है उत्तरदायित्व। कुछ भिक्षु अपना पूरा समय ग्रंथ (त्रिपिटक) पढ़ने में बिता देते थे और कुछ विपश्यना का अभ्यास करने में। बौद्ध भिक्षु को ये दोनों कर्तव्य करने चाहिए। इसी सुत्त में वास धुर (दैनंदिन कर्त्तव्य) की भी चर्चा है। मछली पकड़कर जीविका उपार्जन करने की बात का यहां उल्लेख है। गांव में डकैती (गामधात) होने की बात का भी उल्लेख यहां मिलता है।

ब्राह्मणधम्मिकसुत्तवर्णना से यह पता चलता है कि इस समय तक लोगों में यह दृढ़ धारणा हो गयी थी कि पुत्र की प्राप्ति होने पर ही कोई स्वर्ग जा सकता है। नरक में जाने के भय से ४८ वर्षों तक ब्रह्मचर्य का पालन कर भी ब्राह्मण पुत्र-प्राप्ति के लिए विवाह करते थे।

यहां विभिन्न प्रकार के यज्ञों का उल्लेख है जैसे अश्वमेध, पुरुषमेध, वाजपेय्य आदि। इसी सुत्त से यह स्पष्ट होता है कि कैसे ब्राह्मणों ने (पुरोहित वर्ग के ब्राह्मणों ने) अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए मंत्रों की रचना की, राजा के सम्मुख उनके महत्त्व बताये और राजा से ही ऐसा यज्ञ करवाया जिसमें उन्होंने गौ, (जो हमारी माता, पिता, भ्राता के समान है तथा जिससे हमें औषधियां मिलती हैं) पर तलवार चलायी। पशुहिंसा विशेष कर गो-हिंसा उसी समय से प्रारंभ हुयी।

सम्मापरिब्बाजनीयसुत्तवर्णना में यह उल्लेख है कि कैसे शाक्यों और कोलियों के बीच रोहिणी नदी के पानी को लेकर झगड़ा हुआ। चूंकि भारत कृषिप्रधान देश है, यहां आज भी खेतों में सिंचाई के लिए पानी को लेकर झगड़े होते हैं। इसी सुत्त की वर्णना में हमलोग बुद्ध को आकाश में चलते देखते है। इससे यह निस्संदेह प्रमाणित हो जाता है कि इस काल तक आते-आते गौतम बुद्ध को लोग देवतुल्य समझने लगे थे।

पूरलाससुत्तवर्णना से स्पष्ट होता है कि बुद्धों में अंतर आठ बातों को लेकर है। वे हैं– पारमी पूरा करने की अवधि, उनकी उम्र, उनके कुल, उनकी लंबाई, गृह से निष्क्रमण करने की विधि, ध्यान की अवधि, वृक्ष जिनके नीचे वे बोधि प्राप्त करते हैं, और प्रभामण्डल का आकार।

प्रथम है **अद्धानवेमत्तता** जिसका अर्थ यह है कि कितनी अवधि में कोई बुद्ध पारमी पूरा करते हैं।

जिस बुद्ध में श्रद्धा तथा वीर्य से प्रज्ञा अधिक होती है वे चार असंख्येय और एक लाख कल्प में पारमी पूरा करते हैं, जिनमें वीर्य का आधिक्य होता है वे आठ असंख्येय और एक लाख कल्प में तथा जिनमें श्रद्धा अधिक होती है वे सोलह असंख्येय तथा एक लाख कल्प में पारमी पूरा करते है।

बुद्ध **आयुवेमत्तता, कुलवेमत्तता, प्रमाणवेमत्तता, नेक्खम्मवेमत्तता, पधानमेत्तता, बोधिवेमत्तता** तथा **रस्मिवेमत्तता** के दृष्टिकोण से भी भिन्न-भिन्न होते हैं। जहां तक **कुलवेमत्तता** की बात है, यहां कहा गया है कि बुद्ध क्षत्रिय और ब्राह्मण कुल में ही पैदा हो सकते हैं और किसी कुल में नहीं। लगता है ऐसी बात कहकर अट्ठकथाकार अपने को जाति प्रथा के दलदल से नहीं निकाल पाये। बुद्ध की वह बात कि व्यक्ति जन्मना नहीं कर्मणा बड़ा होता है, यहां गलत प्रमाणित होता है।

इसी सुत्तवर्णना में बुद्ध तथा प्रत्येकबुद्ध में अंतर दिखाया गया है। प्रत्येकबुद्ध तथा अर्हत में यह अंतर है– प्रत्येकबुद्ध की प्रज्ञा अर्हत से अधिक होती है, लेकिन जब बुद्ध और प्रत्येकबुद्ध में अंतर दिखाया जाता है तो कहा जाता है कि बुद्ध की प्रज्ञा असीम है, उसकी तुलना प्रत्येकबुद्ध की प्रज्ञा से हो ही नहीं सकती।

पधानसुत्तवर्णना में मार की दस सेनाओं का वर्णन है। ये सेनाएं हैं– काम, अरति, भूख-प्यास, तृष्णा, स्त्यान-मृद्ध, भय, विचिकित्सा, मान-म्रक्ष, स्तम्भ और लाभसत्कार श्लोक।

पूरलाससुत्तवर्णना में कोशल प्रदेश कोशल क्यों कहलाया– यह एक रोचक कहानी के माध्यम से बताया गया है। राजकुमार महापनाद बहुत उदास रहा करते थे, वे कभी हंसते नहीं थे। राजा ने घोषणा की कि वैसे व्यक्ति को पारितोषिक दिया जायगा जो उन्हें हंसा सके। बहुत लोग अपने-अपने काम छोड़कर आये लेकिन उन्हें हंसा नहीं सके। अंत में शक्र ने अपने यहां से एक व्यक्ति को भेजा जो हंसाने में सफल रहा। जब लोग आने-जाने वालों से पूछते **'कच्चि, भो कुसलं, कच्चि भो कुसलं'** तो लोग **कुसलं** ही उत्तर देते। अतः इस प्रदेश का नाम कोसल पड़ा।

मंगलसुत्तवर्णना में सावत्थि की उत्पत्ति की कहानी है। लोग पूछते **किं भण्डं अत्थि–** क्या सामान है, तो उत्तर मिलता **'सब्बं अत्थि'** अर्थात सभी कुछ है। अतः सावत्थि नाम पड़ा।

कामसुत्तवर्णना से हम यह जानते हैं कि जब किसी को अपार दुःख होता है या बहुत बड़ी हानि होती है तब वह बुद्ध की शरण जाता है।[१]

दुट्ठट्ठकसुत्तवर्णना से बुद्ध के कारुणिक होने की बात हम जानते हैं। वे इतने कारुणिक थे कि योग्य व्यक्ति को निर्वाण प्राप्त कराने में सदा तत्पर रहते थे।

सुद्धट्ठकसुत्तवर्णना में चंदाभ की कहानी है। चंदाभ संपन्न ब्राह्मण कुल में सावत्थि में पैदा हुआ था। उसका नाम चंदाभ इसलिये रखा गया था कि उसकी नाभि से एक ज्योति निकलती थी जो चंद्रमा की तरह लगती थी। जब वे बड़े हुए तो ब्राह्मण उनको पालकी में बैठाकर एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाने लगे और यह कहने लगे कि जो चंदाभ के शरीर को स्पर्श करेगा वह शक्तिसंपन्न होगा। लोग आने लगे और उनके शरीर को स्पर्श करने लगे। वे मुद्रा भी देने लगे। इस तरह ब्राह्मणों ने बहुत पैसे बनाये। लेकिन जब उन्हें बुद्ध के पास लाया गया, तब प्रकाश का निकलना बंद हो गया। तब उन्होंने

१. इसे ही मिसेज रीज डेविड्स ने Visa tergo कहा है।

बुद्ध की शरण ली।

चंदाभ पूर्वजन्म में वनपाल था। वह चंदन की आपूर्त्ति करता था। उसकी मित्रता एक सौदागर से हुयी। जब वह सौदागर के पास गया, वहां उन्होंने कस्सप बुद्ध की अस्थियों पर बने चैत्य की पूजा की। चंदन की लकड़ी का अर्द्ध चंद्र बनवाकर उससे उन्होंने वहां पूजा की और उसे चैत्य में रखा। फलतः उसकी नाभि से प्रकाश निकलता था।

पसूरसुत्तवर्णना में पसूर की कहानी है जो वाद-विवाद में अपने को बड़ा निष्णात मानता था। वह जगह-जगह जाकर वाद-विवाद कर लोगों को हराता था, परास्त करता था। श्रावस्ती में सारिपुत्त ने उसे हराया। फलतः वह बौद्ध संघ में लालुदायि के संरक्षण में सम्मिलित हुआ। लालुदायि उतने तेज नहीं थे। पसूर ने लालुदायि को हराया। उसे फिर बड़ा घमंड हुआ और वह बुद्ध से वाद-विवाद करने गया। लेकिन वहां के रहने वाले देवता के प्रभाव से वह कुछ बोल ही नहीं सका।

पारायणवग्ग की **वत्थुगाथावर्णना** से यह पता चलता है कि उस समय भी विमान बनाने की कला लोगों को मालूम थी। कट्ठवाहन ने विमान बनाया। विमान पर चढ़ वे अपने सभी सहायकों के साथ हिमालय गये। वहां अपना राज्य स्थापित किया। वे वहां के राजा हुए। बाद में वाराणसी के राजा से उनकी मित्रता हुई।

बहुमूल्य उपहारों का आदान-प्रदान होने लगा। कट्ठवाहन ने आठ बहुमूल्य कंबलों को हाथी दांत की मंजूषा में वाराणसी के राजा को उपहार में भेजा।

वाराणसी के राजा ने इससे भी अधिक बहुमूल्य उपहार भेजा। वह यह समाचार था कि 'कस्सप बुद्ध लोक में उत्पन्न हुए हैं।' यह समाचार उन्होंने सोने के पत्र पर लिखवाकर भेजा। कट्ठवाहन ने सोलह मंत्रियों, अपने भतीजे तथा सोलह हजार अनुगामियों को बुद्ध के दर्शन के लिए वाराणसी भेजा। लेकिन जब वे लोग वाराणसी पहुंचे कस्सप बुद्ध परिनिर्वाण प्राप्त कर चुके थे। सभी मंत्री तथा उनके अनुगामी बौद्ध संघ में सम्मिलित हो गये। कट्ठवाहन के भतीजे ने अपने साथ बोधिवृक्ष की एक शाखा, बुद्ध का जलपात्र तथा एक भिक्षु को लाया जो बुद्ध धर्म में निष्णात थे।

बुद्धघोस की अट्ठकथा की विशेषताओं का उल्लेख मैंने सुत्तनिपात अट्ठकथा भाग १ की भूमिका में विस्तार से किया है। एक विशेषता है बहुअर्थी शब्दों का भिन्न-भिन्न अर्थ उदाहरण सहित देना। यहां पर भी वह विशेषता मिलती है– जैसे बहुअर्थी शब्द 'भूत' (पृ० २९), 'अभिक्कन्त' (पृ० ७३) तथा 'सुगत' (पृ० २८५) के विभिन्न अर्थ उदाहरण सहित दिये गये हैं। उनकी अट्ठकथा की दूसरी विशेषता यह है कि उन्होंने पोराण अट्ठकथा से कुछ बातें ली हैं पर उन्होंने अंधानुकरण या सिर्फ उनका अनुवाद ही नहीं किया वल्कि अपनी बहुत सी बातें लिखीं हैं।

ज्येष्ठ की परिभाषा देकर उसके प्रकार को जैसे प्रज्ञा में ज्येष्ठ, गुण में ज्येष्ठ, जन्म में ज्येष्ठ और आयु में ज्येष्ठ (देखें पृ०१३०), अल्पेच्छता के प्रकार (पृ० ३०३) पर दिये गये हैं। मात्रा किसे कहते हैं इसका सविस्तर वर्णन पृ० १४० पर किया गया है। पृच्छाओं तथा चारिकाओं के प्रकार क्रमशः (पृ० २४२) पर गिनाये गये हैं। सति (स्मृति) कितने प्रकार की होती है इसे (पृ० १४१) पर दिखाया गया है।

'क्रोध' के बारे में जानने के लिए उरगसुत्त वर्णना देखने के लिए कहा गया है। इससे एक बात स्पष्ट हो जाती है कि बुद्धघोस जो एक बार कह चुकते हैं उसे दुबारा नहीं कहते। पाठकों को वे स्थल

बता देते हैं जहां उसके बारे में विस्तृत रूप से कहा गया है। जैसे **एवं मे सुतं** का अर्थ संक्षेप में जानने के लिए **कसिभारद्वाजसुत्त** और विस्तार से जानने के लिए मज्झिमनिकाय की अट्ठकथा **पपंचसूदनी** को देखने के लिए कहा गया है।

जिस प्रकार वैशाली नाम क्यों पड़ा, लिच्छवी नाम क्यों पड़ा सुत्तनिपात अट्ठकथा भाग १ में कहा गया है उसी तरह यहां सावत्थी, कोसम्बी तथा काकण्डी के बारे में कहा गया है।

व्याकरण का उनका ज्ञान कितना comprehensive, कितना पांडित्यपूर्ण था इसका पता इस बात से चलता है जब वे कहते हैं कि सप्तमी के अर्थ में करण-कारक और सप्तमी के अर्थ में कर्मकारक; कर्मकारक में षष्ठी का प्रयोग; निमित्त अर्थ में सप्तमी का प्रयोग कठोर परिश्रम करने के अर्थ में द्वितीया विभक्ति और वर्त्तमान का प्रयोग अतीतकाल के अर्थ में होता है।

उपयोग अर्थ में षष्ठी, संबंध कारक में कर्मकारक संप्रदान कारक में दुतिया का प्रयोग, अवयव के अर्थ में करण कारक, आकार का अकार, आख्यान अर्थ में द्वितीया विभक्ति, उपयोग अर्थ में कर्मकारक, लिंग व्यत्यय, एतिहतं– यहां **'ह'** निपात है।

बुद्धघोस की उपमा के बारे में सुत्तनिपात अट्ठकथा भाग १ की भूमिका में बहुत कुछ कह चुका हूं। कुछ उपमाओं के बारे में यहां भी कह रहा हूं।

तृष्णा तेल को ज्ञान की अग्नि सुखाती है (पृ० १०२)। पापी भिक्षु चावल रहित भूसे की तरह है (पृ०१०९)।

कसाव को अंगार, पाखाना तथा विषैला सर्प कहा गया है (पृ० १३२)। निर्दयी व्यक्ति की तुलना दाई के उस कपड़े आदि से की गयी है जो तेल आदि गंदगियों से चुपड़ा रहता है (पृ० १८१)।

निर्भीक होना, भयभेरव रहित होना, पर्वत की गुफा में बाघ और वृषभ की तरह बैठना है। मार की उपमा ऐसे कौए से दी गयी है जो पत्थर को चर्बी समझता है (पृ० १९४), दुर्वचन को कुठारी कहा गया है जिसका अपना छेद ही उसकी हानि करता है (पृ० २८५)। रूप आदि की तुलना रज से की गयी है (पृ० ४१४), अकिंचन और अनासक्ति द्वीप हैं (पृ० ४५८), इन्द्रकील की तरह जो हवा से न कांपे (पृ० ४१), जैसे पक्षीगण सुस्वादु फलोपभाग के लिए नित्य फल लगे वृक्ष के पास जाते हैं, वैसे ही लोग बुद्ध के पास जाते हैं (पृ० ४७५), विनम्र कैसे होना चाहिए (पृ० ९०), शील विरहित पापी भिक्षु चावल रहित भूसे की तरह होता है (पृ० १०९), क्लेश की उपमा निद्रा से (पृ० २२९), सात प्रकार के क्लेश अंधकार (पृ० २४८), अंधकार की तुलना बाढ़ से (पृ० २३७), आर्यमार्ग अस्त्र है (पृ० ३४५), सिंह के साथ गीदड़ की तुलना (पृ० ३६४), पृ० ५१ पर एक बिलकुल नयी उपमा है– वैसे याद रखना जैसे सोने के पात्र में सिंह की चर्बी रहती है। पृ० २४३ पर एक अच्छी उपमा वीर्यरूपी पैरों को शीलरूपी पृथ्वी पर रखकर श्रद्धारूपी हाथ से कर्म को क्षय करने वाले फरसे से संसार चक्र के सभी आरों को काट दिया। अविद्या मूर्च्छा है और श्रद्धा, स्मृति, समाधि, कर्त्तुकम्यता (करने की इच्छा) समन्वित अर्हतमार्ग विद्या पृ० ४३०।

विभिन्न उपमाओं के लिए देखें (पृ० १०१, १२८, १८३, २४९-५०, २८०, ३०२, ३०७)।

पालि से हिंदी में अनुवाद करते समय कुछ ध्यातव्य बातें

१. पालि में कुछ शब्द ऐसे हैं जिनका आसानी से हिंदी में रूपांतरण हो जाता है और अर्थ में विभिन्नता नहीं होती जैसे धम्म-धर्म, चम्म-चर्म, कम्म-कर्म, तक्क-तक्र।

२. कुछ शब्द ऐसे हैं जिनका हिंदीकरण करने से विपरीत अर्थ हो जाता है। पालि 'वसवत्ती' (शक्तिशाली) का हिंदीकरण करने पर वशवर्त्ती होता है जिसका अर्थ शक्तिशाली के बिल्कुल विपरीत 'जो वश में रहे' हो जाता है।

लेकिन पालि और हिंदी के बीच एक और भाषा है जिसे बौद्ध संस्कृत कहते हैं जिसमें 'वसवत्ती' का हिंदीकृत रूप 'वशवर्त्ती' का वही अर्थ है जो पालि 'वसवत्ती' का है। ऐसे बहुत से शब्द पालि में हैं जिनका बौद्ध संस्कृत रूप में वही अर्थ है जो पालि में है। अतः पालि के वैसे शब्दों का जिनके बौद्ध संस्कृत रूप का वही अर्थ है जो पालि में है उन्हें अनुक्रमणिका में रखना चाहिए ताकि कालानुक्रम से ये शब्द हिंदी शब्दकोश में जोड़े जायं, समाहित किये जायं। ऐसा करने से हिंदी भाषा समृद्ध होगी और पालि से हिंदी में अनुवाद करना आसान हो जायगा।

पालि में कुछ शब्द ऐसे हैं जिनका न तो संस्कृत रूप है और न जिनका हिंदीकरण हो सकता है। 'सन्तक' ऐसा ही शब्द है जिसका अर्थ होता है 'धन'।

पालि में कुछ ऐसे शब्द हैं जिनका अर्थ हिंदी भाषियों को अटपटा लगेगा। आकाश वैसा ही शब्द है।

आकाश का जो अर्थ हिंदी भाषी जानते, समझते हैं, उससे बिल्कुल भिन्न अर्थ पालि में है।

'आकासं न सितो सिया' (पृ० ४०४) का अर्थ है 'तृष्णा निमित्त न होवे'। रूप आदि के चमकने, सुंदर लगने को आकाश कहते हैं।

पालि शब्दों के संस्कृत रूपों को अनुवाद करते समय ज्यों का त्यों रखना भी ठीक नहीं है। एक उदाहरण से स्पष्ट होगा। पालि के 'ठित' शब्द का संस्कृत, हिंदी रूप 'स्थित' है जिसका अर्थ शब्दकोश में स्थित, खड़ा होना (सम्मान देने के अर्थ में) है, जिसका प्रसंगानुसार अर्थ करने में कहीं 'स्थित' तो कहीं 'खड़ा होना' होगा।

अज्झासय (बौ. स. अध्याशय) का अर्थ 'झुकाव' 'प्रवृत्ति' होता है। यद्यपि यह शब्द हिंदी कोश में नहीं है तथापि इसका प्रयोग इसी अर्थ में अनुवाद में होना चाहिए और इस अर्थ में इसे अनुक्रमणिका में रखना चाहिए ताकि यह शब्द भी हिंदी कोश में इसी अर्थ में आ जाय।

'अनुवाद विमुत्ता' में जो 'अनुवाद' है उसका हिंदी 'अनुवाद' (translation) से कुछ लेना-देना नहीं है। यह 'परिवाद' (शिकायत) से मिलता-जुलता है और इसका अर्थ है 'दोषारोपण से मुक्त'। अप्पमाणा का एक अर्थ 'बिना अंतर के' है, यद्यपि सामान्य अर्थ 'अप्रमाण्य' है।

पालि साहित्य में जगह-जगह पर पे० है। यह इसलिए है कि जो पूर्व में कहा गया है उसे फिर से सुनना है, अवधारण करना है अर्थात याद रखना है, उसे दृढ़ करना है। चूंकि यहां जो कहा गया है वह सुनने तथा पढ़ने मात्र के लिए नहीं है, जानने के लिए है– इसीलिए भावेति, वड्ढेति, ब्रूहेति, बहुलीकरोति आदि शब्दों का प्रयोग बार-बार हुआ है।

सुत्तनिपात की प्राचीनता

सुत्तनिपात की प्राचीनता निम्नलिखित प्रमाणों से सिद्ध होती है।

सुत्तनिपात के चार सुत्त जैसे **तुवटक सुत्त, मुनिसुत्त, नालकसुत्त** और **सारिपुत्तसुत्त** अशोक के भाब्रू शिलालेख में क्रमशः **विनय समुकंसे, मुनिगाथा, मोनेयसूते** तथा **उपतिस पसिने** के नाम से उल्लिखित है। भाब्रू शिलालेख में सात सुत्तों का उल्लेख है। इनमें से तीन **अलियवसानि, अनागतभयानि** और **लाहुलोवाद** को छोड़कर शेष चार सुत्त सुत्तनिपात में मिलते हैं। इससे स्पष्टतः सुत्तनिपात की प्राचीनता सिद्ध होती है। और जो तीन सुत्त इसमें नहीं हैं वे भी प्राचीन हैं क्योंकि अलियवसानि, अरियवंस सुत्त के नाम से अङ्गुत्तरनिकाय में, अनागतभयानि भी अङ्गुत्तरनिकाय में तथा लाहुलोवाद राहुलोवादसुत्त के नाम से मज्झिम निकाय में पाये जाते हैं। अशोक ने अपने शिलालेख में सुत्तनिपात से चार सुत्तों को लिया – इस बात से सुत्तनिपात की प्राचीनता तथा इसका महत्त्व स्पष्ट हो जाता है। लगभग यही बात भिक्षु धर्मरक्षित ने अपने सुत्तनिपात के अनुवाद के 'ग्रन्थ परिचय' में लिखी है।

सुत्तनिपात की प्राचीनता के बारे में भिक्षुरक्षित ने यह प्रमाण दिया है कि इसके कई सुत्त अन्य ग्रंथों में पाये जाते हैं जैसे **मेत्तसुत्त, रतनसुत्त, महामङ्गलसुत्त** खुद्दकपाठ में, **खग्गविसाणसुत्त** अपदान में, **सुन्दरिक भारद्वाजसुत्त, आलवकसुत्त, कसिभारद्वाजसुत्त, सुभासितसुत्त** तथा **कोकालिकसुत्त** संयुत्तनिकाय में और **सेलसुत्त** तथा **वासेट्ठसुत्त** मज्झिमनिकाय में संगृहीत हैं।

यहां तक तो पूरे-पूरे सुत्तों की बात हुई। इसके अतिरिक्त धम्मपद, उदान, इतिवुत्तक, थेरगाथा तथा थेरीगाथा की बहुत-सी गाथाएं सुत्तनिपात में ज्यों की त्यों उल्लिखित हैं। भिक्षु धर्मरक्षित के अनुसार इसकी अनेक गाथाएं एवं सुत्त 'महायान संस्कृत साहित्य के महावस्तु, ललितविस्तर आदि ग्रंथों में भी पाये जाते हैं।' प्रथम शताब्दी ईसवी में प्रणीत मिलिन्द पञ्हो में सुत्तनिपात का नाम तो आया ही है साथ-साथ इसकी कई गाथाओ का भी यहां उल्लेख है।

भिक्षु धर्मरत्न तथा भिक्षु धर्मरक्षित ने सुत्तनिपात की प्राचीनता सिद्ध करने के लिए कई ऐसे शब्दों का उल्लेख किया जो फोसवेल के अनुसार सुत्तनिपात में पाये जाते हैं और जो वैदिक भाषा से मिलते-जुलते हैं। उन्होंने समूहतासे, पच्चयासे, चरामसे, भवामसे, आतुमानं, सुमन्ता, अवीवदाता, जानेत्व कुप्पटिच्चसन्ति, पावा आदि शब्दों का उल्लेख किया है। ये सारे शब्द वैदिक भाषा अर्थात छान्दस से मिलते-जुलते हैं।

इतना ही नहीं भिक्षु धर्मरत्न के शब्दों में 'सुत्तनिपात की गाथाओं' के छन्द भी प्राचीन वेद उपनिषद के छन्द के निकट हैं। गण विचार का बन्धन उनमें नहीं के बराबर है। वेद की भांति सुत्तनिपात की गाथाओं में भी आठ अक्षरों वाला अनुष्टुभ, गयारह अक्षरों वाला त्रिष्टुभ तथा बारह अक्षरों वाला जगती छन्द बहुतायत से मिलते हैं। इसमें अनुष्टुभ छन्द की कितनी गाथाएं हैं जिनमें ६ पाद हैं –

त्रिष्टुभ छन्द की कितनी गाथाएं हैं जिनमें पांच या छः पाद हैं। किन्हीं-किन्हीं त्रिष्टुम छन्द की गाथाओं में तो सात-सात आठ पाद तक हैं। वेद को छोड़ पीछे कहीं भी छन्द की यह स्वतंत्रता देखने को नहीं मिलती। इन उदाहरणों के आधार पर डॉ. वापट ने सुत्तनिपात की प्राचीनता सिद्ध की है।

भिक्षु धर्मरक्षित ने सुत्तनिपात की प्राचीनता को इस आधार पर भी सिद्ध किया है कि सुत्तनिपात के अट्ठकवग्ग तथा पारायणवग्ग पर लिखी गयी निद्देश नामक अट्ठकथा त्रिपिटक के अन्तर्गत आती है।

मैं न तो छन्द शास्त्र का ज्ञाता हूं और न मैने वेदों का ही अध्ययन किया है। अतः जिन विद्वानों ने इनके आधार पर सुत्तनिपात की प्राचीनता प्रमाणित की है उन्हें साधुवाद देता हूं।

सुत्तनिपात की प्राचीनता मेरे विचार से इस बात से भी सिद्ध होती है कि इसमें बुद्ध के प्रारंभिक जीवन की बहुत सारी बातें हैं। अत्तदण्डसुत्त, पब्बज्जासुत्त, पधानसुत्त इसकी प्राचीनता के अकाट्य उदाहरण हैं।

डॉ० ओमप्रकाश पाठक का खूब बारीकी से प्रूफ देखने के लिए, श्रीमती विनीता त्रिपाठी का पूरी पुस्तक का टंकण करने तथा बार-बार प्रूफ में संशोधन करने के लिए असीम धैर्य तथा अथक परिश्रम के लिए एवं श्री गणेश वाडेकर का पुस्तक, के सुंदर गेटअप तथा उसको प्रेस के लायक बनाने के लिए धन्यवाद करता हूं।

अंगराज चौधरी